जैनेन्द्र की कथा कल्पना में मनोविज्ञान और मनोविश्लेषण

डॉ0 विजय कुमार सिंह

प्रवक्ता–हिन्दी
रघुवीर महाविद्यालय थलोई
भिखारीपुर कलॉ, जौनपुर
E-mail- vijaykumarsi2013@gmail.com

जैनेन्द्र की कथा कल्पना में मनोविज्ञान और मनोविश्लेषण करने से पहले मनोविज्ञान और मनोविश्लेषण के बारे में विचार करते हैं। मनोविज्ञान मन का विज्ञान है। मनोविज्ञान का अंग्रेजी पर्यायवाची शब्द 'साइकोलॉजी' है जो यूनानी भाषा के 'साइके और लोगस' से मिलकर बना है साइके का अर्थ है आत्मा और लोगस का अर्थ है विचार विमर्श। अतएव साइकालॉजी वह विज्ञान है जिसमें मनुष्य की आत्मा के विषय में चर्चा हो।[1]

मनोविश्लेषण फ्रायड द्वारा अन्वेषित एक मानसिक चिकित्सा की विधि है, जिसकी सहायता से मानसिक रोगों का उपचार सरलता से किया जा सकता है और जिसका प्रभाव स्थायी होता है। अज्ञात मन के अन्तर्द्वन्द्वों तथा भावना ग्रन्थियों का ज्ञान इस विधि के द्वारा सरलता से हो सकता है। शारको की सम्मोहन विधि को फ्रायड ने इसीलिए त्यागा कि उससे रोगी का स्थायी उपचार नहीं हो सकता और संक्रमण की समस्या भी सुलझायी नहीं जा सकती।

जैनेन्द्र हिन्दी उपन्यास साहित्य में मनोविश्लेषणवादी उपन्यासकार हैं। उनके उपन्यासों में मनोविश्लेषण की प्रवृत्ति का विकास भारतीय आध्यात्म चिंतन को परे रखकर नहीं देखा जा सकता। जैनेन्द्र के औपन्यासिक शिल्प सदैव से ही कथानक की उपेक्षा करते रहें हैं और पात्रों की व्यापकता को अस्वीकार करता है। पात्रों के वर्हिजगत् की संवेदनशीलता की अपेक्षा आन्तरिक जगत उसकी मनोरागता तथा संघर्षात्मकता को ही विश्लेषित करने में सिद्धहस्त बना है।[2] उनके समस्त औपन्यासिक धारा पर विचार करते हुए कहा जा सकता है कि–

1. जैनेन्द्र के प्रथम चार उपन्यासों में अपने चिन्तन के अनवरत विकास का आकलन है। परख उपन्यास में जो मनोविश्लेषण है उसके साथ उपन्यासकार की उपस्थिति 'सम्वादिक' रूप प्रतीत होती है।

2. मन की अंतरंगता के चित्रण के स्तर पर प्रथम पुरूष या उत्तम पुरूष की शैली अपनाकर उपन्यासकार ने आत्मकथात्मकता पर बल दिया है। परख, सुनीता और विवर्त को छोड़कर किसी न किसी माध्यम से आत्मकथा के रूप में कथा प्रस्तुत की गयी है।

Scanned with CamScanner

3. मन की अंतरंगता के स्तर पर उपन्यासकार ने स्व–प्रथित वैयक्तिक जीवन–दर्शन एवं जीवन मूल्यों की स्थापना की है।

4. कामवासना की अनिवार्यता के स्तर पर काम के दंश से पीड़ित समाज को नियुक्त करने के लिए स्वार्पण की आधार भूमि देकर आत्मपीड़क चेतना से अहम् विगलन की नवीन दिशा प्रतिपादित की है। काम अमुक्ति से प्रायः सभी पात्र पीड़ित हैं और काम अमुक्ति की प्रतिक्रिया में ही जीवन के प्रति जो विद्रोहात्मक रुख है, वह रतिदान या देहदान से विगलित होता है।

5. कथावस्तु की महत्ता मनोविश्लेषण की स्थिति पर नगण्य या अल्प हो गयी है और जो भी कथा आधार रूप में उपलब्ध होती है उसमें भी विश्रृंखलता ही मिलती है।

6. वर्णनात्मकता के स्थान पर मनोविश्लेषण के परिप्रेक्ष्य में नाटकीय घटनात्मकता ही कथा–प्रवाह में योग देती है।

7. समस्त उपन्यासों के पर्यालोचन से यह सुस्पष्ट हो जाता है कि जैनेन्द्र की विशिष्ट गाँधीवादी सैद्धान्तिकता अपने व्यावहारिक पक्ष पर आदर्शवादी मुद्रा में व्यंजित होती है।[3]

जैनेन्द्र ने सभी उपन्यासों में पात्रों की मानसिकता को दो स्तरों पर व्यंजित किया है। चेतन मानसिकता और अवचेतन मानसिकता।[4] जैनेन्द्र के अनुसार मानव में दो मूल वृत्तियाँ होती हैं– एक स्पर्द्धा की, दूसरी समर्पण की। ये दोनों परस्पर विरोधी वृत्तियाँ उसके आन्तरिक संघर्ष का आधार हैं। इनमें से एक या दूसरी जिस हद तक विकसित होती है, उसी हद तक मनुष्य में सत्यान्वेषण क्षमता का तिरोभाव या उन्मेष होता है।

जैनेन्द्र ने मनोजगत् और आंतरिक सत्य के उद्घाटन के लिए विश्लेषणात्मक प्रवृत्ति को ही महत्त्व प्रदान किया। जैनेन्द्र के उपन्यासों में मानसिक उदात्तीकरण के उदाहरण प्रत्यक्ष हैं। 'परख' की कट्टो की सहज चाह तो सत्यधन के लिए है। सत्यधन के आगे दुविधा है। कट्टो सत्यधन को इस रूप में उपलब्ध न कर सकी तो वह तथाकथित विवाह के ही रास्ते से हट जाती है और बिहारी के साथ विवाह मुक्ति की प्रतिज्ञा से बँधती है। सत्यधन और कट्टो के बीच सहज सम्बन्ध नहीं हो पाता, तो इसलिए कि दूर की गरिमा उसकी मानसिक बनावट को हर समय प्रभावित कर रही थी। अगर इस कथन का विवेचन किया जाय तो यह बात सामने आती है कि अहम् को सुरक्षित रखने के लिए सत्यधन ने कट्टो से विवाह नहीं किया बल्कि एक कवच अपने लिए सुरक्षित रखा है। इसी प्रकार कट्टों बिहारी का वरण करके भी विधिवत दाम्पत्य से वंचित रहती है, तो यह सहज त्याग नहीं, बल्कि त्याग की ग्रन्थि है। उचित समय आने पर वह सत्यधन पर अतिरिक्त उपकार करना चाहती है। अर्थात् एक प्रकार की मनोवैज्ञानिक विजय चाहती है।

सारा आधुनिक मनोविज्ञान एक शब्द के सहारे खड़ा है, ग्रन्थि, गाँठ Complex यहाँ तक कि व्यक्तित्व के सम्पूर्ण विकास का सारा श्रेय ही इसी को दिया जाता है। सिगरेट पीने की लाचारी तब कही जा सकती है जब यह पता चले कि पीने वाले को वह आनन्द मिलता है जो बच्चे को माँ के स्तन चूसने में या अँगूठा चूसने में मिलता है और वह अपनी मौखिकवृत्ति को तृप्त करता है। उसी

Scanned with CamScanner

तरह की विकृति, असाधारण श्रीकांत में भी है। उसका दाम्पत्य जीवन सुखमय नहीं है, चारों ओर निरानन्द का वातावरण हैं। कोई कारण नहीं दीख पड़ता। सुनीता अनिद्य यौवना है, लाखों में एक है। अनुगता तो है ही। शिक्षिता है, किसी आधुनिक से कम नहीं है। शेक्सपीयर तथा बर्नाड शॉ को पढ़ती है, वाइलिन बजाती है तो वातावरण में समाँ बँध जाता है। अब प्रेमानन्द के लिए क्या कमी रह गयी? पर फिर भी यह बात सम्भव नहीं दीखती।

जैनेन्द्र के सारे पात्र मनोवैज्ञानिक छद्म से अवतरित हैं। उनके रहस्य का उद्घाटन बिना मनोवैज्ञानिक रश्मि के नहीं हो सकता है। श्रीकांत एक ऐसा व्यक्ति है जिसमें प्राणोंद्वेग को स्पंदित करने के लिए एक आहत तृतीय व्यक्ति की आवश्यकता है। (Necessity of injured third party)

फ्रायड ने ऐसे व्यक्तियों के मनोविज्ञान का खूब विश्लेषण किया है और कहा है कि कुछ व्यक्तियों में तो यह प्रवृत्ति इतनी बढ़ जाती है कि अपनी ओर से भी ऐसी परिस्थिति का निर्माण करते हैं कि उनकी प्रेयसी को किसी तीसरे व्यक्ति के सम्पर्क में आना पड़े। जहाँ उन्हें पता चला कि उनकी प्रेयसी दूसरों से प्रेम करने लगी कि उनके हृदय में भी उसके लिए प्रेम का स्रोत खुल पड़ा।

सुनीता उपन्यास में आकर जैनेन्द्र के उपन्यासकार मन में यह बात जम सी गयी मालूम पड़ती है कि कला तथा साहित्य के मूल में मानव की ग्रंन्थियाँ ही काम करती हैं। मनुष्य कलाकृति के द्वारा अपनी मनोग्रन्थियों से ही मुक्ति पाने की चेष्टा करता है। फ्रायड का कथन है कि दुग्ध–पान से तृप्त बालक जब माँ की गोद में विश्राम करता है तो उसकी मुद्रा में उसी गम्भीर संतोष की झलक पायी जाती है, जिसका दर्शन वयः प्राप्त मानव की कामतृप्ति की अलसाई मुद्रा में पाया जाता है। हरिप्रसन्न की जिस मुद्रा का यहाँ चित्रण किया गया है उसमें एक ओर रति–तृप्ति, काम–तृप्त व्यक्ति की मुद्रा में कितना साम्य है।[5]

जैनेन्द्र के उपन्यासों में कुछ पात्रों को मनोविश्लेषक तथा कुछ पात्रों को न्यूरोटिक मान लेना मनोविज्ञान के सिद्धान्तों को हद से बाहर ले जाता है। जैनेन्द्र के त्यागपत्र उपन्यास में यदि प्रमोद मनोविश्लेषक है और मृणाल न्यूरोटिक पात्र तो प्रमोद को धीरे–धीरे मृणाल को अपने मतानुसार परिवर्तित कर लेना चाहिए था। लेकिन दिखाई यह देता है कि प्रमोद अपनी मान्यताओं से हटता हुआ अजीब तरह की वैराग्य भावना से ग्रस्त होता जा रहा है।

जैनेन्द्र के उपन्यासों में पात्र विचित्र तो थे, उनके अन्दर वात्याचक्र तो था पर उनका व्यक्तित्व विखरा नहीं था। अर्थात् इगो सर्वथा अपने सिंहासन से अपदस्थ नहीं हुआ था। हाँ उस पर अचेतन शक्तियों का आक्रमण होता था और वह कभी–कभी धकिया भी दिया जाता था पर फिर भी अपनी सत्ता में अव्यभिचरित था।

मनोविज्ञान में साहचर्य नियम का बहुत महत्त्व है। इसी के वशीभूत होकर संस्कृत के मुद्राराक्षस के एक श्लोक की याद आ रही है, जिसमें उत्तम, मध्यम तथा नीच व्यक्ति के लक्षण बतलाये गये हैं।

"प्रारभ्यते खलु विघ्नभयेत् नीचैः, प्रारभ्य विघ्नविहताः विरभन्ति मध्याः।
विधैः प्रतिमदं तु प्रतिहन्यमानाः, प्रारब्धमुत्तम जनाः नहिः परित्यजन्ति।।"[6]

Scanned with CamScanner

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से मुख्यतः फ्रायडिन मनोविश्लेषण की दृष्टि से प्रत्येक सामान्य व्यक्ति में भी एक हद तक आत्मपीड़क (मेसोचिस्टिक) तथा परपीड़क (सैडस्टिक) प्रवृत्तियाँ मौजूद रहती हैं– जिनकी जड़ में ध्वंस तथा रचना की मूल प्रवृत्तियों की टकराहट रहती है । जो मानवीय सम्बन्धों को भी दूर तक प्रभावित करती हैं। कभी–कभी परिवेश तथा प्रारम्भिक अनुभवों के कारण इन दोनों प्रवृत्तियों का अस्तित्व असंतुलित हो जाता है और यह असंतुलन ही किसी व्यक्ति को परपीड़क या आत्मपीड़क बनाता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से आज की पूरी सभ्यता प्रेम के अभाव से पीड़ित है और परिणाम स्वरूप यौन विकृति, उन्माद, विक्षिप्तता तथा सामूहिक घृणा का शिकार है।

जैनेन्द्र जी ने सुखदा में स्थूल घटनाओं की अपेक्षा नारी के अन्तर्मन की प्रतिक्रियाओं के चित्रण पर बल दिया है। सुखदा वैवाहिक जीवन से अतृप्त होकर राजनीति के क्षेत्र में आती है। वस्तुतः उसका अचेतन मन अतृप्ति वासना की पूर्ति के लिए व्याकुल है, किन्तु चेतन मन से वह इसे स्वीकार नहीं करती। उपन्यास में इसके चेतन मन का मनोविश्लेषण है, अचेतन मन का नहीं।

मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में मानव की प्रेम एवं सेक्स सम्बन्धी समस्याओं पर मनोविश्लेषणात्मक दृष्टि से विचार किया गया है। प्रेम में मनः स्थिति का परिवर्तन एवं मानसिक संघर्ष एवं निर्णय की अस्थिरता सहज प्रवृत्ति है। आन्तरिक द्वन्द्व संघर्ष का परिणाम है। प्रेमी युगल की प्रत्येक पद्धति में विचारात्मक द्वन्द्व होता रहता है।

जैनेन्द्र अपने विचारों, अपने कथानक और चरित्रों के इर्द–गिर्द अक्सर एक मनोवैज्ञानिक रहस्य बुनते हैं। उनकी कुल यात्रा मनोवैज्ञानिक रहस्यों के भीतर है। चरित्रों के भीतर यहाँ जब तब कठिन मनोवैज्ञानिक गाँठ होती है जिसे वाह्य आचरण के संकेतो से एक हद तक ही प्रत्यक्ष किया जा सकता है। कुंठाग्रस्थ जीवन निरर्थक होता है– इसकी ध्वनि भी प्रकट हुए बिना नहीं रहती। मानसिक अंतर्द्वन्द्वों और प्रतिक्रियात्मक घात प्रतिघातों के सूक्ष्म रेखांकन द्वारा कथा सूत्र का विकास किया है। जिस तरह की पैतरेबाजी सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक शीत–युद्ध का दर्शन दास्तोवस्की के उपन्यासों में होता है, जिस तरह की अज्ञात तथा अचेतन स्तर पर चलने वाली मोर्चाबन्दी दास्तोवस्की के पात्रों के व्यापारों में परिलक्षित होता है, उसी का एक हल्का सा रंग जैनेन्द्र की कृतियों में भी मिलता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची

1. लालजी राम शुक्ल– सरल मनोविज्ञान, पृष्ठ–2
2. जैनेन्द्र उपन्यास और कला–विजय कुलश्रेष्ठ– पृष्ठ 60,61
3. जैनेन्द्र उपन्यास और कला–विजय कुलश्रेष्ठ– पृष्ठ 62
4. जैनेन्द्र उपन्यास और कला–विजय कुलश्रेष्ठ– पृष्ठ 79
5- As it Sinles asleep at the breast, utterly Satisfied, it bears, Page-191
6. मुद्राराक्षस–पृष्ठ संख्या–19

Scanned with CamScanner